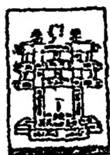
भाव और अनुभाव

मुनि नथमल

*



भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

ज्ञानपीठ लोकोदय ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक – १८२

सम्पादक एवं नियामक :
लक्ष्मीचन्द्र जैन

BHAWA AUR ANUBHAWA

MUNI NATHAMAL

Bharatiya Jnanpith
Publication

Second Enlarged Edition 1965

Price Rs 2 00

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

प्रधान कार्यालय
९ अलीपुर पार्क प्लेस, कलकत्ता-२७

प्रकाशन कार्यालय
दुर्गाकुण्ड रोड, वाराणसी-५

विक्रय केन्द्र
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली-६

द्वितीय परिवर्द्धित संस्करण १९६५

मूल्य दो रुपये

सन्मति मुद्रणालय, वाराणसी–५

गतिको
अनुभूतिको
कल्पनाको

—मुनि नथमल

द्वितीय सस्करण



भाव और अनुभावके प्रति जनताका जो लगाव रहा, उसे मैं वाक् और मनस्की समापत्ति मानता हूँ। जहाँ वाक् और मनस् एक दिशागामी होते है, वही हृदयका स्पन्दन धमनियोमे नव-रक्त प्रवाहित करता हे।

सलिल कमलको उत्पन्न करता है पर उसके परिमलका प्रसार वह नही करता। वह पवनका काम है। भारतीय ज्ञानपीठने वही काम किया है। इसलिए 'भाव और अनुभाव'का दूसरा परिवर्द्धित सस्करण सद्य अपेक्षित हो रहा है।

दिल्ली —मुनि नथमल

२०२१ आश्विन शुक्ला ७

कल्पनाकी ऊर्मियाँ अभिनय करती है, मन अनन्त भविष्यको अपने बाहुपाशमे जकड लेता है।

बन्धन और मुक्ति एक क्रम है।

भविष्यकी पकडसे मुक्ति पानेवाली पहली कली है 'कल' और दूसरी है 'परसो'।

इस कुसुमकी कलियाँ अनन्त है। जो खिलती है, वह 'आज' बन जाती है। सचाई वही है जो आज है।

आज 'कल' बनता है, कार्य कृत बन जाता है, अनुभूतियाँ बच रहती है।

जो चले वह वाहन नही होता। वाहन वह होता है, जो दूसरोको चलाये। अनुभूतिके वाहनपर जो चढ चलते है, उनका पथ प्रशस्त है।

आजकी धार पतली होती है, उसे वही पा सकता है जो सूक्ष्म बन जाये। कलकी लम्बाई-चौडाई अमाप्य है। अनुभूतियोसे बोध पाठ ले, वर्त्तमानको परखकर चले और कल्पनाओको सुनहला रूप दिये चले वह विद्वान् है, वह पारखी है और वह है होनहार।

'अनुभव चिन्तन मनन' के बाद यह दूसरी पुस्तक है। गद्य काव्यकी यह धारा आगे चले, यह मै स्वय चाहता था और ऐसा सुझाया गया, फलत. इसका निर्माण हो गया। आचार्यश्री तुलसी मेरे लिए प्रकाश-स्तम्भ ही नही, महान् प्रेरणा-स्रोत है। उनके आशीर्वाद और पथ-दर्शन सदा मेरे साथ रहे है। इतस्तत बिखरे हुए कुछ गद्योका चयन कर मुनि दुलहराजजीने इसे परिवृत्त करनेका यत्न किया है।

भाव शाश्वत है, सत्य अमिट है। मेरी भाषा उसे अपनेमें प्रतिबिम्बित कर सके तो उसकी स्वयमे कृतार्थता होगी।

बाल-निकेतन,
राजसमन्द — मुनि नथमल
२०१७ ज्येष्ठ कृष्णा १४।

संकेतिका



भाव

और अनुभाव

[सूक्तियां]



समयके चरण

स्मृतिके लिए तुम्हारे पास विशाल अतीत है, कल्पनाके लिए असीम भविष्य, पर करनेके लिए केवल वर्तमान है, जो बहुत ही सीमित और बहुत ही स्वल्प।

अतीतको तुम क्या देखोगे? वह तुम्हारी ओर देख रहा है और देख रहा है तुम्हारी कृतियोंको। तुम वर्त्तमानको देखो। जिससे वह फिर तुम्हारी ओर आँख उठाकर न देख सके।



अतीत जब झाँकता है

मुझे चरण-चरणपर चलनेमें कठिनाईका अनुभव हो रहा था। यदि वर्तमानपर अतीतका प्रभाव न होता, यदि प्रवृत्ति अपना परिणाम छोड़ जाती, यदि मैं दस मील न चला होता तो मुझे कठिनाईका अनुभव नहीं होता। मेरी कठिनाई मुझे सिखा रही थी कि अतीत वर्तमानको प्रभावित करता है और मनुष्यकी प्रत्येक प्रवृत्ति अपना परिणाम छोड़ जाती है।



गतिका क्रम

मैने आगे बढे हुए पैरसे पूछा, तुम बडे हो ?
उसने उत्तर दिया, नही ।
फिर आगे क्यो ? उसके गर्वको सहलाते हुए मैने कहा ।
उसने उत्तर दिया, गतिका यही क्रम है ।
मैने पीछे रहे पैरमे पूछा, तुम छोटे हो ?
उसने उत्तर दिया, नही ।
फिर पीछे क्यो ? उसके गर्वपर हलकी-सी चोट करते हुए मैने कहा ।
उसने उत्तर दिया, गतिका यही क्रम है ।
मैने दूसरे ही क्षण देखा, आगेवाला पैर पीछे है और पीछेवाला आगे । मै मौन नही रह सका । मैं कह उठा, यह क्यो ?
दोनोने एक स्वरसे उत्तर दिया, गतिका यही क्रम है ।
मै विस्मय-भरी आँखोसे देखता रहा – वे अपने लक्ष्यकी ओर बढते चले जा रहे थे ।



विस्तारका मर्म

विस्तार वही पा सकता है, जो पैरोंका मूल्य आंक सके। बरगद जो विस्तार पाता है, उसका मर्म यही तो है।

दूसरे वृक्षोंके पैर शाखाओंको जन्म देते हैं, बरगदकी शाखाएँ पैरोंको जन्म देती हैं – विस्तारका मर्म यही तो है।

बरगद इस सत्यको पा चुका है कि शाखाओंके आधारपर पैर नहीं टिकते, किन्तु पैरके आधारपर शाखाएँ टिकती हैं।



यन्त्र और चैतन्य

यन्त्र भी चलता है, मनुष्य भी चलता है। पर दोनोकी गतिमे उतना ही अन्तर है जितना यन्त्र और मनुष्यमे। यन्त्र निश्चित गति-से चलता है, उसमें देश, काल और परिस्थितिका विवेक नही होता, क्योकि वह मनुष्य नही है। मनुष्य अपनी गतिमे परिवर्तन भी लाता है, उसमे देश, काल और परिस्थितिका विवेक होता है, क्योकि वह यन्त्र नही है।



पहले तोलो

सत्य अच्छा है पर उसे पानेका उतना ही यत्न करो, जितना सहन कर सको। तुमने देखा होगा – प्रकाशमे मनुष्य देख पाता है किन्तु प्रखर प्रकाशके सामने आँखें चौंधिया जाती है। उसे सहनेकी क्षमता हर आँखमे नही होती।



भाव और अनुभाव

पहेलियाँ

जो दिलाया जाता है वह अविश्वास है। विश्वास दिलानेकी वस्तु नही, वह स्वयं प्राप्त होता है।

यह कैसा अचरज ? जो चाहिए उसका भान ही नही और उसके लिए तडप रहे हो, जो नही चाहिए।

तुम आनेवालोको नही पहचानते, क्योकि वे वहाँसे आये है जहाँ तुम नही थे। तुम पहचानते हो जानेवालोको, क्योकि वे वहाँसे गये है, जहाँ तुम रह रहे हो।



साँचा

प्रशंसाकी भट्टीमे गलाकर तुम व्यक्तिको चाहो जैसे ढाल सकते हो, पर याद रखो — अभिमानपर चोट की तो वह अकड जायेगा। फिर वह टूट सकता है किन्तु टल नही सकता।



मौन

समुद्र . जलधर ! जल तूने मुझसे लिया है। आश्रय कही है नही, तू शून्य विहारी है। आकृतिसे तू श्याम है, फिर भी गरज रहा है ?

जलधर तेरे खारे जलको मीठा बनाकर मैं लोगोको सन्तुष्ट करता हूँ और वही जल तुझे लौटा देता हूँ। फिर मेरे गर्जनसे तुझे आपत्ति क्यो हो !

जलधर समुद्र ! पुत्र तेरा कलकी है, पुत्री है चपल । तू समूचा क्षारमय है फिर तू किस बूतेपर गरज रहा है ?

समुद्र . जलधर ! तू भी तो मेरा ही तनुज है– आनन्द देनेवाला, परोपकारपरायण, खारेको मीठा करनेवाला ! तेरे-सरीखे वेटेपर मुझे गर्व है, फिर मुझे गरजनेका अधिकार क्यो न हो ? अब जलधरके पास कहनेको कुछ भी शेप नही था।



नीचे भी देखो

यह कितना आश्चर्य है कि केलेसे तुम अनेक बार फल पानेकी आशा करते हो? केवल बड़े-बड़े पत्तोंको देख मत भूलो। इस तनेको भी देखो – कितना कोमल और कितना दुबला-पतला!

फलमे रस होता है इसीलिए वह महत्त्वपूर्ण नही होता किन्तु वह महत्त्वपूर्ण इसलिए होता है कि उसमे बीज होता है। रसका मूल बीज है, बीजका मूल रस नही है।



ऊपर भी देखो

मै जितना नीचे देखता हूँ, अपने-आपमे उतना ही विशाल लगता हूँ। जब थोडा ऊपर देखता हूँ तो मेरी विशालता इस असीम गगन-मे विलीन हो जाती है।

दूसरेको भी देखो

जिसे देखना चाहिए वहाँ दृष्टि नही जाती। जिसे नही देखना चाहिए वहाँ देखनेका प्रयत्न होता है। यह कैसा विपर्यय! काचमे मनुष्य अपने-आपको ही देखता है। कब किसने तनिक भी उसकी स्वच्छता-को देखा?



यह कैसा साम्य ?

परीक्षा-शक्ति नही होती, तबतक सब समान होते हैं। सब समान हो, किसीके प्रति राग-द्वेष न हो, यह अच्छाई है। पर ज्ञानकी कमीके कारण सब समान हो, यह अच्छाई नही है।

यह कैसा ज्ञान ?

अज्ञान दुःखका मूल है, इसमे कोई सन्देह नही। पर ज्ञान दुःखका मूल क्यो बन रहा है – यह प्रश्न-चिह्न आज अधिक स्पष्ट है।



तटका बन्धन

तुम भले चाहो, ज्ञान बढे। यह मत चाहो, ज्ञानकी बाढ आये। तुम यही चाहो, ज्ञानकी धारा सम्यक्-दर्शन और सम्यक्-चरित्रके तटोके बीच बहती रहे। यह मत चाहो, ज्ञानको धार इन दोनों तटोको तोडकर बहे।

गहराईमें

ऊपर क्या देख रहे हो? यह शैवाल, यह गन्दगी और ये जीव-जन्तु! गहराईमे पैठो, डुबकियाँ लो, फिर बतलाना सागर कैसा है?



प्रश्न-चिह्न

मानवमे विद्या और बुद्धिका बल बढ रहा है, पर हृदयकी सुकुमारता, भ्रातृभाव, सौहार्द और अपनत्व घट रहा है। इसे हम विकास कहे या ह्रास ?

गतिशीलता वस्तुका एक पक्ष है। दूसरा पक्ष है स्थितिशीलता। आज वस्तुका पहला पक्ष प्रबल है, दूसरा निर्बल। आवश्यकता है गति और स्थितिका सन्तुलन रहे। अनन्त आकाशमे केवल गतिसे वस्तु कहाँ जाकर टिकेगी !



निदान

वडा सहृदय है
        हाथमे सत्ता नही होगी ।
वडा दयालु है
        पासमें पैसा नही होगा ।
वडा सत्यवादी है :
        वाक्पटु नही होगा ।
वडा गम्भीर है :
        कोई मित्र नही होगा !
वड़ा शान्त है
        नासमझ होगा !



यह मुक्ति

भगवान् भक्तिके भूखे होते हैं, भक्त मुक्तिका। भक्त भगवान्को बाँधे या भगवान् भक्तको छोड़े। कौन क्या करे ? मुक्ति बन्धनमें-से निकलती है। जो बांधना जानता है वह सब कुछ जानता है। कमलने मधुकरको बांधा, चाँदने चकोरको। मधुकरको वहां मृत्यु स्वीकार है, चकोरको अग्नि-पान। ओह ! यह मुक्ति ...



भाग्य-निर्णय

ओ ज्योतिषी! मेरे भाग्यका निर्णय तुम मुझे ही करने दो। तुम मेरे भविष्यको शब्दोंके कठघरेमें जकड़नेका यत्न मत करो। तुम अतीतके व्याख्याता हो सकते हो पर भविष्यकी व्याख्याका अधिकार मेरे ही हाथोंमें रहने दो। तुम विश्वास रखो कि वर्तमान-पर अधिकार रखनेवाला ही भविष्यकी व्याख्या कर सकता है।



टीस

"मैं नहीं होता तो प्रकाशको कौन पूछता? मैंने जिसे जीवन दिया वह मेरी पीठपर प्रहार करे, कैसी कृतघ्नता?"

तिमिरके उन शब्दोंमें एक गहरी टीस है, आह है, पुकार है और है एक...

आवेग

अपनी सम्पत्तिमें धैर्य होता है, पर-सम्पत्तिमें आवेग। पानीका पूर आता है, तटवर्ती वृक्षोंको धराशायी करता चला जाता है। पर्वतके पानीका उसमें क्या बिगड़ा? शोभा नदीकी घटी, तट नदीका टूटा।



प्रगतिका मन्त्र

सहगमन कैसे होगा ? तुम शीघ्र चलते हो, वह चलता है धीमे।
सहगमन होगा तुम कुछ धीमे चलो, और वह कुछ तेज चले।
यह गतिरोध नही है।

यह है हजारोकी प्रगतिका मूल-मन्त्र।

चरण-चिह्न

तू चलेगा तो तेरे चरण धूलमे अंकित होगे, परन्तु ऐसे चल कि लोग तेरे पद-चिह्नोके पीछे चलनेके लिए लालायित हो।



अखण्ड व्यक्तित्व

वहाँ सारी भाषाएँ मूक बन जाती हैं, जहाँ हृदयका विश्वास बोलता है। जहाँ हृदय मूक होता है वहाँ भाषा मनुष्यका साथ नहीं देती। जहाँ भाषा हृदयको ठगनेका यत्न करती है वहाँ व्यक्तित्व विभक्त हो जाता है। अखण्ड व्यक्तित्व वहाँ होता है जहाँ भाषा और हृदयमें द्वैध नहीं होता।



सब कुछ

दूसरोपर अधिक भरोसा वही करता है जिसे अपनी शक्तिपर भरोसा नही होता। मनुष्य जागकर भी सोता है इसका मतलब है कि उसे अपने-आपपर भरोसा नही है। मनुष्य सोकर भी जागता है, इसका अर्थ है कि उसे अपने-आपपर भरोसा है। जिसे अपने-पर भरोसा है, वह सब कुछ है।

उदय और अस्त

एक व्यक्तिने देखा : कमल खिले हुए हैं, उनपर मधुकर मँडरा रहे हैं, सूर्यकी रश्मियाँ उन्हें छू रही हैं। उसे यह अच्छा नहीं लगा। वह सूर्यके पास जा पहुँचा। "सूर्य! तू कितना भोला है। कमल तेरी ओर नेत्रोंको लाल किये निहार रहा है और तू उसपर अपना सारा प्यार उँडेल रहा है" — सूर्यके दिलमें एक चुभन पैदा करते हुए उसने कहा।

अब वह कमलके पास था। "तू सूर्यसे प्यार करता है, पर नहीं जानता भोले कमल! वह तेरी जड़को काट रहा है — जल और पंकका शोषण कर रहा है।" उसकी इस वाणीने कमलको मर्माहत कर डाला।

अब वह मधुकरके पास पहुँचा। "यह कमल सूर्यके लिए खिला हुआ है, तेरे लिए नहीं। मूर्ख मधुकर! तेरी गुंजारपूर्ण आराधनाका क्या अर्थ है?"

दिन अस्त होनेको था, तीनोंके मन फट गये। वे बिछुड़ गये। दुर्जनका दिल नाच उठा।

समयने उन्हें सम्मति दी। वे फिर आ मिले। उसने फिर उन्हें विलग करनेका यत्न किया पर उदयकी वेला थी, इस समय उस दुर्जनकी बात कौन माने?



प्रगति और व्यापकता

तुम इसी दृष्टिसे क्यो देखते हो कि कोल्हूका बैल घेरेको तोड आगे नही बढता, प्रगति नही करता। इस दृष्टिसे क्यो नही देखते कि वह लक्ष्यकी दूरीको कम कर रहा है, प्रगति कर रहा है। यह घेरा प्रगतिमे बाधक नही है, उसमे बाधक है लक्ष्यका अभाव।

तुम इस दृष्टिसे क्यो देखते हो कि नदी तटोसे बँधकर बहती है, व्यापक नही है। इम दृष्टिसे क्यो नही देखते कि वह नया जीवन लिये बह रही है, स्वच्छताको व्यापक बना रही है। ये तट व्यापकताके बाधक नही है, उसके बाधक है — प्राचीनताका व्यामोह और गन्दगी।



गुप्तवाद

प्रेम प्रदर्शनकी वस्तु नही है ।

सरसोंके पीत पुष्पोंमें सौन्दर्यका दर्शन हो सकता है, उनके सौरभकी अनुभूति हो सकती है, पर स्नेहकी कल्पना नही हो सकती । वह तब प्रकट होता है, जब उसके प्राण लिये जाते हैं ।



अपराध

यह सीधा-सरल ताडका वृक्ष है। यह दुबला-पतला खजूरका पेड है। ये नीरा लेनेवाले हँसिया और हँडिया लिये उनके पीछे पड रहे हैं। इस सर्दीके समयमे इनके घाव चू रहे है। इनका और कोई अपराध नहीं है, अपराध यही है कि इनमें मिठास है।



पूर्णकी भाषा

अपने-आपमे सब पूर्ण है। अपूर्णता तब आती है, जब एक-दूसरेमे लगाव होता है। वक्ताके बिना श्रोता और श्रोताके बिना वक्ता अपूर्ण है। दृश्यके बिना दर्शक और दर्शकके बिना दृश्य अपूर्ण है। अपने-आपमे कोई अपूर्ण नही है और दूसरेसे लगाव रखकर कोई पूर्ण नही है।



लचीलापन

आग्रहमे मुझे रस है, पर आग्रही कहलाऊँ, यह मुझे अच्छा नही लगता, इसलिए मै आग्रहपर अनाग्रहका झोल चढा देता हूँ।

रूढिसे मै मुक्त नही हूँ, पर रूढिवादी कहलाऊँ, यह मुझे अच्छा नही लगता, इसलिए मै रूढिपर परिवर्तनका झोल चढा देता हूँ।



सफलताका सूत्र

जिसका संकल्प फलवान् होता है उसे बल मिलता है, किन्तु फल उसीको मिलता है जिसका संकल्प बलवान् हो।

तुम कार्यका प्रारम्भ करते ही सफलता चाहते हो, यह कैसा मोह ? तुमने देखा होगा, वृक्ष कितने वर्षोंके बाद सफल बनता है।



वालक्रीड़ा

देव ! मैं तुम्हे ढूंढनेको बाहर गया, तब तुम नही दीखे ।
मैं थककर अपने घरमे चला आया ।
मैंने विस्मयके साथ देखा कि तुम वहाँ वैठे हो ।
मैं स्थूल हुआ, तुम सूक्ष्म हो गये ।
मैं सूक्ष्म हुआ, तुम स्थूल हो गये ।
देव ! तुम मेरे साथ वाल-क्रीडा कर रहे हो । इस प्रकार तुम्हारा वडप्पन कैसे सुरक्षित रहेगा ?



परछाइयाँ

अच्छे कार्यका अर्थ ही है . स्वल्पता । वह अच्छा कार्य ही क्या, जो विघ्नोसे खाली हो और बहुत हो जाये ।

आदि और अन्तमे बीज ही होते है । विस्तार केवल मध्यमे होता है ।

मध्यको पकडो ' एकता-ही-एकता दीखेगी । अनेकता इसलिए हाथ लगती है कि तुम केवल छोरोको पकडते हो ।



टेढ़ी-सीधी रेखाएँ --

राजनीतिक चालोंका स्वरूप ही ऐसा है कि उससे प्रारम्भमें समस्या सुलझती-सी लगती है, किन्तु अन्तमें उलझ जाती है। और स्पष्टताका रूप यह है कि प्रारम्भमें उससे समस्या उलझती-सी लगती है किन्तु अन्तमें सुलझ जाती है।

विनोद

विनोद जीवनकी वह उर्वरा है जहां आनन्दोंकी बुआई होती है, पर ध्यान रहे कहीं हलकेपनकी खाद न गिर जाये, उसमें विषादका बीज न उग आये।

■

जड़की बात

विकास स्वतन्त्र परिस्थितिमे ही हो सकता है, इस सिद्धान्तके आलोकमे मैंने देखा : शाखाएँ बढती चली जा रही है।

विकास तभी हो सकता है जब मूल सुदृढ हो, इस सिद्धान्तके आलोकमे मैंने देखा : शाखाएँ बढती चली जा रही हैं।

टिकेंगे वे ही, जिनकी जडे सुदृढ है। पत्र, पुष्प और फल वृक्षके परिणाम है, निदान नही। ये उसकी शोभा बढानेवाले है, आधार नही।



अभिव्यक्ति

वह शक्ति किस कामकी जिसकी अभिव्यक्ति न हो। सूर्य और तपे हुए पथिकके बीच वही बीज शान्तिपूर्ण मध्यस्थता कर सकता है जिसकी अभिव्यक्ति हो गयी हो, जो वृक्ष बन गया हो।

अनुभूतिका तारतम्य

जहाँ साध्यकी पूर्त्तिके लिए कष्ट सहा जाता है, वहाँ आनन्दकी अनुभूति होती है। कष्टकी अनुभूति वहाँ होती है, जहाँ वह साध्य की पूर्त्तिके लिए नहीं सहा जाता।



झुकाव

तुम किसीके प्रति झुकते हो और किसीसे दूर होते हो उससे मुझे क्या ? मेरी आपत्ति यही है कि जहाँ तुम हजारोंके भाग्यकी कुंजी अपने हाथमें थामे किसीके प्रति झुकते हो और किसीसे दूर होते हो।

चुभन

फूलने कांटेका नुकीलापन नहीं लिया पर उसकी चुभन ले ली। परिमलकी चुभन कांटेकी चुभनसे कम कष्ट नहीं देती।



सचाईकी समझ

जो सामने है वह सचाई कहाँ है, सचाई वह है जो सामने नही है। जो तरुण है, वह सचाईको नग्न रूपमे कैसे रख सकता है ? और जो तरुण है उसके सामने सचाई नग्न रूपमे कैसे उपस्थित होगी ? एक शिशु ही सचाईका निरावरण कर सकता है और एक शिशु ही उसका नग्न रूप देख सकता है।

भयसे अधिक तरुण कौन होगा जिसके सामने सचाई अपना घूँघट कभी नही खोलती। अभयसे बढकर शिशु कौन होगा जिसके सामने सचाई कभी अपना रूप नही छिपाती।



चीर

कल्पनाका चीर इतना पतला है कि उसमें-से तुम देख सकते हो पर उसे ओढकर चल नही सकते ।

पुरुपार्थका चीर इतना सघन है कि उसमें-से तुम देख नही सकते, पर उसे ओढकर चल सकते हो ।

लघु-गुरु

गुरुत्वने अन्त करणको छुआ कि मनुष्य लघु वन गया और लघुत्वने अन्त करणका स्पर्श किया कि वह गुरु वन गया ।



उलझन

तुम दूसरोको अपनी दृष्टिसे देखते हो और अपनेको दूसरोकी दृष्टिसे ।

तुम दूसरोको अपनी गज़से नापते हो और अपनेको दूसरोकी गजसे ।

यही तो वह उलझन है जिससे सारी उलझनें जन्म पाती है ।

कम-अधिक

अन्तर्की शुद्धिका महत्त्व अपने लिए अधिक होता है, दूसरोके लिए कम ।

व्यवहारकी शुद्धिका महत्त्व अपने लिए कम होता है, दूसरोके लिए अधिक ।



न्यायकी भीख

न्याय और अन्यायके गीत गाना छोडो। अपनी दुर्बलताके अतिरिक्त और अन्याय है भी क्या ? न्याय है शक्ति, न्याय है सत्ता और न्याय है अधिकार। जिनके पास शक्ति, सत्ता और अधिकार नही है, वे न्यायकी भीख माँगते ही रहेंगे।

चाह और राह

मनुष्यमें परिणामके प्रति जो अभिलाषा होती है, वह कारणके प्रति नही होती। वह स्वर्ग चाहता है, स्वर्गकी साधना नही चाहता।



नया और पुराना

दुनियामे नया तत्त्व कोई है भी नही। जो है, वह पुराना है, बहुत पुराना है। नयेका अर्थ है, पुरानेको प्रकाशमे लाना। जो आलोक बनकर पुरानेको प्रकाशित करता है वही नव-निर्माता है। ससारके जितने भी नव-निर्माता हुए हैं उन्होने यही किया है — आलोक बनकर प्राचीनको नवीन बनाया है।

अकम्प

सदाचार उसीके पीछे चलता है, जो देश, काल और परिस्थितिके सामने नही झुकता।



पारखी

अपने रूपमे सब वस्तुएँ शुद्ध होती है। अशुद्ध वह होती है, जिसका अपना रूप कुछ दूसरा हो और दीखे वह दूसरे रूपमे। यह अन्तर् और बाहरका भेद जनताको भुलावेमे डालता है। इसीलिए मनुष्यको पारखी बननेकी आवश्यकता हुई।

परख

परीक्षाके लिए शरीर-बल अपेक्षित नही है। वह बुद्धि-बलसे होती है। शरीर-बल जहाँ काम नही देता वहाँ बुद्धि-बल सफल हो जाता है।



किधर

विमुखतासे दूरी बढती है और उन्मुखता सामीप्य लाती है। कलकत्तासे हम चले और घुसडी आये। कलकत्ता चार मील दूर था और दिल्ली आठ सौ इक्यासी मील। किन्तु हम दिल्लीके उन्मुख थे और कलकत्ताको ओर पीठ किये हुए चल रहे थे। हमने देखा, एक दिन दिल्ली चार मोल दूर है और कलकत्ता आठ सौ इक्यासी मील।

जागरण

सोनेके लिए जागनेवाले बहुत होते है पर जागृतिके लिए जागने-वाले विरले ही होते है।



छिद्र

हिरनी छलांगे भर रही थी।
सगीतकी ध्वनि कानोंमे आ टकरायी।
चरण रुक गये।
छोटे-से छेदने गतिरोध पैदा कर दिया।
छेद आखिर छेद ही होता है,
भले फिर वह छोटा हो या बडा।

मार्ग खुल जाये तो?

नीमका कीडा नीममे ही आनन्द मानता है। न माने तो जिये भी कैसे? यदि उसे आमका पेड और उसकी महक मिल जाये तो क्या वह वापस नीममें आना चाहेगा?



स्मृति और विस्मृति

कुछ बाते ऐसी होती है, जिन्हे सदा याद रखना चाहिए। कुछ बाते ऐसी होती है, जिन्हे तत्काल भुला देना चाहिए।

याद रखनेकी बाते वे ही नही होती, जो प्रिय है। और भुला देनेकी भी वे ही नही होती, जो अप्रिय है।

वे प्रिय और अप्रिय दोनो प्रकारकी बाते याद रखनेकी होती है, जो जीवनपर अपना असर छोड जाये और वे प्रिय और अप्रिय बाते भुला देनेकी होती है, जिनका जीवनपर कोई प्रभावोत्पादक परिणाम नही होता।



जीवनके पीछे

जीवन और क्या है? देह और प्राणोकी चेतनाके साथ जो समन्विति है वही तो है।

जो जिया जाता है, वही जीवन नही है। जिससे जिया जाता है वह भी जीवन है। खाये बिना कोई नही जीता, यह जितना सच है, उतना ही नही। उससे कही अधिक सच यह है कि खानेमें सयम रखे बिना कोई नही जीता। सयम जीवन ही नही किन्तु जीवनका भी जीवन है।



ज्योतिर्मय

ज्योतिहीन जीवन भी श्रेय नही है और ज्योतिहीन मृत्यु भी श्रेय नही है। ज्योतिर्मय जीवन भी श्रेय है और ज्योतिर्मय मृत्यु भी श्रेय है।

वीर पत्नी विदुलाने अपने पुत्रसे कहा, "बिछौनेपर पडे-पडे सडनेकी अपेक्षा यदि तू एक क्षण भी अपने पराक्रमकी ज्योति प्रकट करके मर जायेगा तो अच्छा होगा।"



मृत्यु-महोत्सव

सफलता जीवनमें होती है पर मृत्यु सबसे बडी सफलता है। जिसकी मृत्यु उत्कर्षमें न हो, आनन्दकी अनुभूतिमें न हो उसके मध्य जीवनकी सफलता विफलतामें परिणत हो जाती है।

मूल्यांकन

जो कुछ अच्छा कार्य होता है उसका अपने-आपमें मूल्य होता है किन्तु जनताके द्वारा उसका मूल्यांकन तभी होता है जब वह उस तक पहुँच पाये।

■

अनेक और एक

तुम शाखाओकी अनेकता देख चिन्तित मत होओ। तुम देखो उनका मूल एक है। अनेकताका अर्थ विरोध ही नही होता, विकास भी होता है।

तुम दूध और पानीकी एकता देख हर्षित मत होओ। इनका मूल एक नही है। एकताका अर्थ सवर्धन ही नही होता, शक्तिका अल्पीकरण भी होता है।

दीन व्यक्तियोको देखकर दीन होनेवाले कितने है, परन्तु वे विरले है, जो दीनोका उद्धार करे।

■

प्रिय

जो मनको भाता है वही प्रिय है। प्रिय क्या है और क्या नहीं? इसे परिभाषामें नही बाँधा जा सकता। प्रत्येक व्यक्तिकी अपनी-अपनी रुचि और अपना-अपना मनोभाव होता है। प्रत्येक व्यक्ति देश, काल और परिस्थितिके अनुसार किसीके प्रति झुकता है तो किसीसे दूर होता है। एक ही वस्तुके साथ प्रियताका शाश्वत बन्धन नही होता।



काम्य और अकाम्य

रुचिकी अपेक्षा सच यह है . जीवन काम्य है, मृत्यु अकाम्य । आचरणकी अपेक्षा सच यह है जिसे जीवन काम्य है, उसे मृत्यु भी काम्य है और जिसे मृत्यु अकाम्य है, उसे जीवन भी अकाम्य है ।

सही समझ

मायावीकी चालोको समझना जरूर चाहिए । चालाकीको समझन हिसा नही है, हिसा है चालाकी करना ।



श्रेष्ठतम

तीन वैद्य थे। पहले वैद्यका प्रयत्न ऐसा होता, जिससे किसीके रोग हो ही नहीं, दूसरा वैद्य रोग होते ही औषधि दे रोगीको स्वस्थ बना देता। तीसरा वैद्य रोगको बढ़ने देता और जब वह असाध्य-सा हो जाता तब ऐसी पुड़िया देता कि रोगी स्वस्थ हो जाता। लोग उसे बहुत बड़ा वैद्य मानने लगे। सारे नगरमें उसका प्रभाव फैल गया। एक दिन उसके प्रशंसक उसका यश गा रहे थे, तब तीसरे वैद्यने कहा, "श्रेष्ठतम वैद्य मेरा बड़ा भाई है, जो रोग होने ही नहीं देता। मेरा दूसरा भाई श्रेष्ठतर है, जो रोग होते ही रोगीको स्वस्थ कर देता है। उनका कार्य आपके सामने नहीं आता इसलिए आप लोग उसका मूल्य नहीं आंक सकते। मेरा कार्य आपके सामने आता है, इसलिए उसका मूल्य आंका जाता है।



गहरी डुबकी

जितना प्रयत्न पढनेका होता है, उतना उसके आशयको समझनेका नही होता। जितना प्रयत्न लिखनेका होता है, उतना तथ्योके यथार्थ सकलनका नही होता। अपने प्रति अन्याय न हो, इसका जितना प्रयत्न होता है, उतना दूसरोके प्रति न्याय करनेका नही होता। गहरी डुबकी लगानेवाला गोताखोर जो पा सकता है, वह समुद्रकी झाँकी पानेवाला नही पा सकता।



खतरा

जलधर नया-नया आया और पवनके सहारे ऊँचे आकाशमे चढ गया। उसे वाहरी जगत्का कव अनुभव था ? दूसरोके सहारे ऊँचा चढना, भयसे खाली नही होता, इसे वह नही जानता था। पवनने अपना हाथ खीचा और जलधर धरतीपर आ गिरा।



अनाग्रह

एक रस्सीको पकड दो आदमी खीचते है — एक इधर और एक उधर। परिणाम क्या होता है? रस्सी टूटती है, दोनो आदमी गिर जाते है। खिचाव करनेवाले अर्थात् गिरनेवाले। जो खिचाव-को मिटाता है वह गिरनेसे उबार लेता है।



नेता

नेताका अर्थ है दूसरोको ले चलनेवाला। जो व्यक्ति नेता होकर भी दूसरोके मनको नही पढ सकता, वह दूसरोको साथ लिये नही चल सकता। दूसरोको साथ लेकर चलनेके लिए जो चलता है वह दूसरोके मनको नही पढ सकता। दूसरोके मनको वह पढ सकता है, जिसके मनकी स्वच्छतामे दूसरोका मन अपना प्रतिबिम्ब डाल सके। जिसका मन इतना स्वच्छ होता है उसकी गतिके साथ असख्य चरण चल पडते है।



नेतृत्व

प्रत्येक मनुष्य चिन्तन नही कर सकता कि मुझे कहाँ जाना है। सोचने-वाले कुछ दूरकी मोचते है। पर नेता सोचता है, मुझे समाजको उस केन्द्र-बिन्दुपर ले जाना है, जहाँ सबका लाभ है। सब नेता नही होते और सब अनुयायी भी नही होते। सब गाये ही हो तो उन्हे कौन ले जाये ? अगर सब ग्वाले ही हो तो किसको ले जाये ?



स्वतन्त्र अस्तित्व

हम हमारी विशालतामे ही दूसरोकी विशालताको लीन न करे किन्तु अपनी दृष्टिको स्वच्छ रखकर ही उसमे दूसरोकी विशालताको प्रतिबिम्बित होने दें।

चमत्कारको नमस्कार

दुनिया चमत्कारको नमस्कार करती है। व्यक्ति नही पूजा जाता शक्ति पूजी जाती है। पूर्णिमाके चांदकी पूजा नही होती, दूजका चांद पूजा जाता है।



चमक

जहाँ सिद्धान्तकी गुरुता कार्यकी गहराईमे लीन हो जाती है वहाँ कार्य और सिद्धान्त एक दूसरेमे चमक ला देते हैं।

सामग्री चौधिया देती है पर प्रथम दर्शनमे आदिसे अन्त तक व्यक्तिका तेज ही चमकता है। उपकरण किसीके अन्तर्‌को नही छू सकता।



कला

कला आख़िर वस्तु क्या है ? आकर्षक शक्तिका जो अंश है, वही तो कला है। प्रकृतिमें कला है, चैतन्यमें भी। आचारमें कला है, विचारोंमें भी। सत्के कण-कणमें कलाकी अभिव्यक्ति है।

सबसे बड़ी कला है दूसरोंके हृदयका स्पर्श करना। उस कलाका मूल्य कैसे आँका जाये जो दूसरोंके हृदय तक पहुँच ही नहीं सकती।



अनावृत

मनकी शुद्धि और दिलकी भलाई न मिले तो साफ-सुथरा शरीर और मृदु मुसकान केवल धोखा है। फटे-चिथडे और रूखा व्यवहार महत्ताको ढाँक नही सकते।

नम्रता

दूसरोके गुणोके प्रति जो अनुराग और अपनी वृत्तियोमे जो मृदुता होती है वही नम्रता है। बुराई या अन्यायके सामने झुकना नम्रता नही, कायरता है।

द्वैत

जहाँ द्वैत है वहाँ परस्पर सापेक्षता आवश्यक है। एकको समझनेके लिए दूसरेको समझना ही होगा। जहाँ एक ही होता है, वहाँ समझनेकी स्थिति ही नही बनती। एक अनेक-सापेक्ष होता है। और अनेक एक-सापेक्ष।

अद्वैत

अभेद एकता नही समता है। समताका ही दूसरा रूप है— एकता। इसका फलित होता है कि द्वैतमे समताकी भावना ही अद्वैत-की परिभाषा है।



पण्डित और साधक

पशु और पण्डितमे जितना भेद है, उतना ही भेद पण्डित और साधकमे है। पशु अहिंसाकी भाषा नही जानता जब कि पण्डित जानता है। साधक वह है, जो उसकी भाषा जानने तक ही न रहे, उसकी साधना करे।

> आर्य! तू ब्रह्मचारी होना चाहता है तो तू सब कुछ उसीके लिए कर। आस्वादके लिए मत सूँघ, आस्वादके लिए मत देख, आस्वादके लिए मत चख, आस्वादके लिए मत सुन, और आस्वादके लिए मत चिन्तन कर।



व्यक्तिवाद

अपने अभिप्रायोंको ही सोलह आना सही मान उन्हें दूसरोंपर लादनेकी प्रवृत्ति बढ़ रही हैं, वह सामाजिक भलाईके नामपर व्यक्तिवादी मनोवृत्तिका विस्तार है।

व्यक्ति-स्वातन्त्र्यकी बात सूझी है, पर यह जाल है। इसमें फँसना सहज है, निकलना कठिन।



पर और परम

स्वार्थ . स्वमे लीन रहनेकी वृत्ति ।

दूसरोसे इसका सम्बन्ध नही जुडता अतः इसका विशेष मूल्य नही आँका जाता ।

परार्थ . दूसरोके लिए अपने 'स्व' का विसर्जन ।

इसका स्वरूप है 'स्व' को दूसरोमे लीन कर देना । इससे दूसरोको लाभ पहुँचता है । अत इसका विशेष मूल्य आँका जाता है ।

परमार्थ . स्वको परममे लीन कर देना ।

परमके लिए सब कुछका त्याग । यह आत्मलीनता है । आत्म-साधकके लिए इसका मूल्य सर्वोत्कृष्ट है ।

इन तीनोमें :

पहला	व्यक्तिवाद है ।
दूसरा	समाजवाद है ।
तीसरा	मोक्षवाद है ।



कृतज्ञता

कृतज्ञताके दो शब्दोंका मूल्य वह नहीं आँक सकता, जो केवल लेना ही जाने। जिसके पास कृतज्ञताके दो शब्द भी देनेको न हों, उससे दरिद्र कौन होगा ?

एक पुष्प अपने उपादानोंसे उतना भिन्न हो ही नहीं पाता कि वह उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करे।



अमात्य

उस पुरुषके वारेमे लिखना कठिन होता है, जो अपने अन्तर्-जगत्मे खिलकर ससारके सामने आये, जिसे अपनी श्रीवृद्धिमे बहिर्जगत्का प्रत्यक्ष सहयोग न मिले।

महापुरुषके जीवनमे विकल्प नही होता। उसमे कुशल कलाकारकी तूलिका और कविकी मनोविहारी लेखनी चरम नही बनती, तव दूसरा क्यो कुछ सोचे ?



विवेक

विवेकका अर्थ है पृथक्करण। भलाई और बुराई दो हैं। विवेक इन्हें बांट देता है। कोई आदमी आज भला है पर वह पूर्वसंचित बुराईका फल भोगता है। प्रश्न हो सकता है—यह क्यों? इसका उत्तर यही है कि विश्वकी व्यवस्थामें विवेक है।

कोई आदमी आज बुरा है पर वह पूर्वसंचित भलाईका फल भोगता है तब सन्देह होता है। उसके समाधानके लिए यह पर्याप्त है कि विश्वकी व्यवस्थामें विवेक है।



तर्ककी सीमा

प्रत्यक्ष या सीधी बातके लिए तर्क आवश्यक नही होता। तर्कका क्षेत्र है, अस्पष्टता। स्पष्टता माने है प्रत्यक्ष। प्रत्यक्षका अर्थ है तर्कका अविषय। तर्ककी अपेक्षा प्रेम और विश्वास अधिक सफल होते है। जहाँ तर्क होता है वहाँ जाने-अनजाने दिल सन्देहसे भर जाता है। जहाँ प्रेम होता है वहाँ सहज विश्वास बढ़ता है।

श्रद्धाके आलोकमे जो सत्य उपलब्ध होता है,
वह बुद्धि या तर्कवादके आलोकमे नही होता।



श्रद्धाकी भाषा

श्रद्धा ज्ञानकी परिपक्व दशाका नाम है। ज्ञानके अभावमें जो श्रद्धा होती है वह यथार्थमे श्रद्धा नही होती, किन्तु एक संस्कारगत रूढि होती है।

व्यक्तिमे सबसे बडा बल श्रद्धाका है। श्रद्धा टूटती है, तब पैर थम जाते है, वाणी रुक जाती है और शरीर जड हो जाता है। श्रद्धा बनती है तब ये सब गतिशील बन जाते है।



दो वाद

कही श्रद्धा होती है, बुद्धि नही होती। कही बुद्धि होती है, श्रद्धा नही होती। कहते है, श्रद्धा अन्धी होती है, बुद्धि लँगडी। श्रद्धालु चलता है और बुद्धिमान् देखता है। ये दोनो अधूरे है। पूर्णता इनके समन्वयसे आती है।

प्रतिभाका सम्बन्ध मस्तिष्कसे है और वैराग्यका हृदयसे। विश्वास हृदयसे जुडता है तभी उसका सम्बन्ध मस्तिष्कसे होता है।



श्रद्धा

समस्याके समाधानका सबसे बडा सूत्र है श्रद्धा। किसी भी विवाद-का अन्त तर्कसे नही होता, किन्तु श्रद्धासे होता है। श्रद्धा जीवनकी सबसे बडी सफलता है।

श्रद्धेय

समान श्रेणीके लोगोपर सहज श्रद्धा नही होती। उसके लिए आव-श्यक है कि एक पहलेका हो, दूसरा बादका। एक ऊपर हो दूसरा उससे नीचे, और श्रद्धा करनेवालेको श्रद्धेयकी उदारता, समवृत्ति और विशेष योग्यतामे विश्वास हो।



विरोध

विरोध ज्योतिसे पूर्व होनेवाला धुआँ है। वह क्षण-भरके लिए भले ही लोगोकी आँखोको धूमिल बना दे पर अन्तमे ज्योति जगमगा उठती है। वे व्यक्ति धुएँसे कभी निराश नही होते जिन्हे ज्योतिकी आशा होती है।



विरोधका परिणाम

विरोधमे अप्रिय वातावरण ही नही बनता, उसमे प्रिय परि-स्थितिका निर्माण भी होता है। विरोधके समय जो संगठन होता है, वह साधारण स्थितिमे नही होता। अप्रिय परिस्थितिको एक बार सहना ही कठिन होता है। जो एक बार उसे सह लेता है उसके लिए वह अप्रिय नही होती। विरोध मानसिक सन्तुलनकी कसौटी है। विरोधी वातावरणको देख जो घबरा जाता है वह पराजित हो जाता है और जो उससे घबराता नही वह उसे पराजित कर देता है।



समझकी भूल

यह मनुष्यकी मानसिक दुर्बलता है कि वह दूसरोंकी प्रगतिको अवरुद्ध करनेके लिए गलत तत्त्वोंको प्रोत्साहित करता है पर वह इस सत्यको भुला देता है कि बुराईको प्रोत्साहन देनेका परिणाम कभी उसके लिए भी खतरनाक हो सकता है।



गालीका प्रतिकार

गाली वही देता है जो दुर्बल होता है, जो मानसिक सन्तुलन नही रख पाता और जिसका स्नायु-सस्थान विकृत होता है।

गालीसे गालीका प्रतिकार करनेमें वही समर्थ हो सकता है, जो दुर्बल बने, मानसिक सन्तुलनको खोये और स्नायु-संस्थानको विकृत बनाये।

भला वही

बुराई करनेवाला अवश्य ही बुरा होता है पर बहुत अच्छा तो वह भी नही होता जो बुराईके भारसे दब जाये।

बुराईको पैरोंसे रौंदकर चलनेवाला ही अपने मनको मजबूतीसे पकड सकता है।



नये-पुरानेकी समस्या

लोग दो प्रकारकी रुचिवाले होते हैं। कुछ लोग पुरानेमें ही रुचि रखते हैं, परिवर्तन नही चाहते। कुछ लोग नयेको ही चाहते हैं, परिवर्तन चाहते हैं। यह नये और पुरानेका प्रश्न उन्हीके सामने होता है, जो चिन्तक नही होते।

परिवर्तनके साथ आलोचना आती है, उसे
असफलता नही माना जा सकता।



आलोचना

आलोचना जहाँ लोचन है वहाँ निमेष भी है। आलोच्यके लिए वह लोचन है क्योकि उसके द्वारा आत्मालोकन-विवेक-चक्षुके उन्मेषका अवसर मिलता है। आलोचकके लिए आलोचना निमेष है, क्योकि उसकी दृष्टि आलोचनामे ही गड जाती है, फिर वह पारिपार्श्विक सत्यको भी नही निहार सकता।



आलोचना और प्रशंसा

आलोचना दोषकी होनी चाहिए और प्रशंसा गुणकी। किसी व्यक्तिकी आलोचना करनेवाला अपने लिए खतरा उत्पन्न करता है, आलोच्यके लिए वह न भी हो। प्रशंसा करनेवाला प्रशस्य व्यक्तिके लिए खतरा उत्पन्न करता है, अपने लिए वह न भी हो।



आलोचक

कुछ लोगोंका सिद्धान्तसे लगाव नही होता, उन्हे आलोचना प्रिय होती है। वे हर किसी विषयको उसकी सामग्री बना लेते है। कुछ लोग बेकार है। बेकारीमे मनुष्य आलोचनाके सिवाय और करे क्या ?

विरोधका मूल सस्थाओमे नही खोजा जा
सकता। वह व्यक्तियोमे मिलता है।



एक मन्त्र

संसारमे मत्र एक रूप नही होते। कुछ लेनेका होता है, कुछ छोडने-का। जाननेका सब होता है। जो छोडनेका हो उसीको छोडा जाये, शेषको नही। जीवनकी सफलताका यह एक मन्त्र है।

जहाँ लक्ष्य एक होता है वहाँ प्रेम और एकता होनी चाहिए, कदम एक साथ आगे बढने चाहिए किन्तु ऐसा होता नही। सामने कोई कार्य होता नही तबतक एकता या विरोधका परिचय नही मिलता।



श्रम और सोना

सोनेसे जो चाहे वह मिलता है, इसलिए उसका मूल्य है, धूलका नही। इसीलिए सोनेका सग्रह होता है धूलका नही। मूल्यका आरोप यदि श्रममे हो, सोनेसे कुछ न मिले तो आज सोनेकी वही गति हो जाये जो धूलकी है।



भूख और भोग

भूख न आत्माको लगती है और न शरीरको। भोगकी इच्छा न आत्मामे होती है और न शरीरमे। आत्मा और शरीरका योग ही जीवन है। जीवनमे भूख भी है और भोग भी है।

गठबन्धन नहीं

अवस्था गणितका सवाल है। संस्कारका उद्बोधन अन्तरकी वृत्तियोका सवाल है। इन दोनोमे कोई गठबन्धन नही।

साधनाका मार्ग

निग्रह और अनुग्रह ये दोनो एक ही वस्तुके दो पार्श्व है। किसीपर अनुग्रह करनेवाला किसीका निग्रह भी कर सकता है और किसीका निग्रह करनेवाला किसीपर अनुग्रह भी कर सकता है। साधनाका मार्ग निग्रह और अनुग्रहसे परे है।



अर्थवाद

जिस दिन यह समझमे आ जायेगा कि सग्रहकी वृत्तिने मानवता-की जड खोखली कर दी, उस दिन सिर्फ अर्थ रहेगा, उसका वाद नही। अपरिग्रह फैलेगा उसका अनुवाद नही।

यह सही है कि सब अपरिग्रही नही बन सकते पर अपरिग्रहके पथिक बन सकते है।

परिग्रह पीठके पीछे रहे मुंहके सामने नही। लोग उसको न देखे, वह उनको देखे।



उपेक्षा और अपेक्षा

उपेक्षासे अपेक्षा ठीक चलती है। अपेक्षासे अपेक्षा पूरी नही होती। अपेक्षा सुखकी होनी चाहिए। वह परिग्रहमे नही अपने-आपमे है।

अनुसन्धान

अन्वेषणका युग है। दृष्टि पडे वही अनुसन्धान-शालाएँ और अनुसन्धाता है। अनुसन्धान और सभी वस्तुओका हुआ, दोका नही – मानवताका और मानवकी अपनी परिधिका।



अकर्मण्यता नहीं

जैनधर्मने सिखाया अमत्, मत करो, मत् करो। मत्की मात्रा बढ़ेगी, तब नही करनेकी दशा आयेगी। नही करनेका अर्थ अकर्मण्यता नही, किन्तु कर्मण्यताका पथ-प्रशस्त करना है। अमत्का निषेध नही आता, तब मत्का रूप नही खिलता। कुशलमें अकुशलका निरोध होता है, तब ही कुशलका कौशल टिकता है।



अकनका माध्यम

आज मनुष्यके अकनका साधन उसका अच्छा या वुरा आचरण नही रहा है। वह धार्मिक या राजनैतिक सम्प्रदायके लेबलसे आँका जाता है। आस्था और सुझाव अपना-अपना अलग होता है। पर दूरीसे सन्देह वढता है और सम्पर्कसे प्रेम।

वात साधारण है पर है श्रेष्ठ।



रोटी और पुरुषार्थ

आचारके लिए रोटीको ठुकरानेमे पुरुपार्थ है, रोटीके लिए आचारको ठुकरानेमे पुरुपार्थ नही, उसका अभाव है ।

रोटीका दर्शन

आत्मा और परमात्माके गहरे चिन्तनमे डुबकी लगानेवाला भारतीय आज रोटी-दर्शनकी ओर टकटकी बाँधे बैठा है । पहले वह रोटीकी चिन्तासे मुक्त होकर ही वहाँतक पहुँचा । आज वह वहाँ नही पहुँचकर रोटीकी चिन्तासे मुक्त नही है ।



रोटी और मानवता

रोटी मानवके लिए जरूरी है किन्तु वह उसका मूल्य नही है। मानवता रोटी-जैसी जरूरी नही लगती पर वह मानवका सही मूल्य है। रोटीके विना मनुष्य मरता है और विवेकके बिना मानवता।



सम और विषम

जब आवश्यकता पूरी नही होती, तब मनुष्य क्रूर बनता है। जब आवश्यकतापूर्तिके साधन अधिक होते हैं, तब मनुष्य विलासी बनता है। यह विषम स्थिति है।

सम स्थिति यह है कि श्रम करनेवाला आवश्यकता पूरी किये बिना न रहे और श्रम न करनेवाला अधिक न पाये।



समझसे परे

अवसरको समझकर बरतना एक बात है और अवसरवादिता दूसरी बात। अवसरको जानना बुरा नही, उसे जानकर बरतना बुरा नही, बुरा है उसका वाद। 'वाद' ज्ञान और समझसे परे होता है।



सन्तोंका साम्राज्य

विचार सन्तोंका साम्राज्य है। सन्त-विचार सिर्फ माथेकी उपज नहीं, वह द्विजन्मा होता है। मस्तिष्कसे हृदयमें उतरता है, वहाँ पकनेपर फिर बाहर आता है।

भेद-रेखा

सामाजिक जीवन सुविधा देता है, दर्शन नहीं। इसमें वर्तमानको सरल बनाये रखनेका प्रयत्न होता है, भूत और भविष्यका विश्लेपण नहीं।



यह कैसा आश्चर्य ?

पत्रकार-सम्मेलनमे अपनी चचलतापर प्रकाश डालते हुए लक्ष्मीने कहा, "मै तबतक एक जगह नही रह सकती, जबतक मुझे सहृदय स्थान न मिल जाये।"

एक पत्रकारने चुटकी लेते हुए कहा,
"मातर् ! तुम्हारे पास आते ही हृदय कूच कर जाता है फिर यह अन्वेषण कैसा ?"

■

अनुशासनकी समझ

अनुशासन आत्माके गुरुत्वकी कसौटी है। उससे लाघव नहीं आता। लघुता लानेको अनुशासन आये, वह बलात्कार है।

एकान्तवास

सूर्य !
तुम एकान्तवास चाहते हो ? पर
क्या तुम्हारा प्रकाश तुम्हें
अकेला रहने देगा ?



तुलसीके प्रति

विनीतात्मन् ! क्या कहूँ ? तुम्हारी कृतियोने पूर्ववर्त्ती आचार्योकी स्मृति भुला-सी दी है

यह क्या विनय ?

घडेमे चार-पाँच सेर पानी समाता है, अगस्त ऋषि तीन चुल्लूमे सारा समुद्र पी गये ।

यह कैसा वेटा ?



आराध्यके प्रति

भगवन् ! मै ज्यो-ज्यो तुम्हारे पास पहुँचनेकी चेष्टा करता हूँ त्यो-त्यो तुम आगे सरक जाते हो। यह कैसी आँख-मिचौनी ?

भगवन् ! तुम्हारी दृष्टिमे अमृत रहता है। उससे अमरत्व मिलता है—कैसे मानूँ ? भक्त अपने-आपको खो देता है फिर अमरत्व कैसा ?

प्रभो ! तुम अन्तर्यामी हो—यह कैसे मानूँ ? मै तुम्हारे अन्तर्मे पैठनेकी चेष्टा करता हूँ—तुम ऐसा कब करते हो ?

प्रभो ! मुझे वह औषध दो जिसे पी मेरा उत्साह बालक-सा चपल, युवक-सा बलवान् और वृद्ध-सा अनुभवी बने।



निष्कर्ष

आग सबको जलाती है। सोना उसमे जल-जलकर चमक उठता है, इसीलिए तो वह सुवर्ण है। मुक्ताओने अपना हृदय सौपा, कलाकारने उन्हे एक सूत्रमे बाँधा, इसीलिए तो वे अलकार है। प्रकाश अन्धकारको अपना गुण नही दे सका, इसीलिए तो वह आलोक है।



पहल

विधान दूसरोंके लिए होता है, अपने लिए नहीं, वहां वह जीकर भी निर्जीव बन जाता है। महान् जो होता है वह सबसे पहले विधानको अपनेपर ही लागू करता है।



अनेकान्त-दर्शन

इस दुनियामे फाडनेवालोकी कमी नही है परन्तु तुम मत सोचो कि फाडनेवाला बुरा ही होता है। छाछने दूधको फाडा, इसमे बुराई कौन-सी है ? दूध दही बन गया।

इस दुनियामे आघात करनेवालोकी कमी नहीं है पर तुम मत सोचो कि आघात करनेवाला बुरा ही होता है। मथानीने दहीपर आघात किये, इसमे बुराई कौन-सी है ? नवनीत निकल आया, स्नेह साकार हो उठा।



तुच्छ और महान्

जो निसर्गसे महान है
उसमें कुसंग क्या परिवर्तन लायेगा ?
जो निसर्गसे तुच्छ है
वह सत्संगमें रहकर भी क्या कर पायेगा ?
उसे कुसंगसे बचाओ
जो संसर्गसे महान् है ।
उसे सत्संगमें रखो
जो संसर्गसे तुच्छ है ।



महान् कौन ?

जलकणोंने मिलकर सिन्धुको रूप दिया, वह महान् बन गया। ज्वार आया, बूँदोंको असहाय छोड चला गया। प्रश्न होता है . महान् कौन—सिन्धु या बिन्दु ?



युवक वह था

जहां उल्लास अठखेलियाँ करे वहाँ बुढापा कैसे आये ? वह युवा भी बूढा होता है, जिसमे उल्लास नहीं होता — पैंडो भलो न कोसको — चलना एक कोसका भी अच्छा नही है, यह जिसने कहा वह युवक नही था। युवक वह था, जिसने कहा — चरैवेति, चरैवेति — चलते चलो, चलते चलो।



उतार-चढ़ाव

उतार-चढ़ाव किसने नहीं देखे ।
अनुभूतिमें अन्तर है ।
चढ़ावकी अनुभूति गर्वपूर्ण होती है ।
उतारकी अनुभूतिमें वापसीका भाव होता है ।
चढ़ावमें फिर भी सन्तुलन रहता है ।
उतारमें उसे रखना कठिन होता है ।



गति कैसे ?

उत्तरमे देख
वे चिकनी चट्टाने खडी है ।
फिसल न जाना ।
फिसलनेवाला विजेताके पद-चिह्नोपर नही चल सकता ।

दक्षिणमे देख .
वह निर्झरका कलरव हो रहा है ।
वह न जाना ।
प्रवाहमे वहनेवाला विजेताके पद-चिह्नोपर नही चल सकता ।

पूर्वमे देख
वह वनस्थलीका झुरमुट ।
फँस न जाना ।
फँसनेवाला विजेताके पद-चिह्नोपर नही चल सकता ।

पश्चिममे देख .
ये मालतीके फूल बिछे है ।
मीठी परिमलको पा छितर न जाना ।
छितरनेवाला विजेताके पद-चिह्नोपर नही चल सकता ।



ममताका देश

मेरा देश वह है,
जहाँ स्त्री और पुरुष नही है।
मेरा देश वह है,
जहाँ धर्म और सम्प्रदाय नही है।
मेरा देश वह है,
जहाँ गार्हस्थ्य और सन्यास नही है।
मेरा देश वह है,
जहाँ शिक्षक और शिष्य नही है।

ओ समताके शास्ता ! मुझे मेरी ममताके देशमे ले चल।



सत्यम् शिवम् सुन्दरम्

जो रमणीय होता है वह शिव भी होता है। जो शिव न हो, कल्याणकारी न हो, वह पल-भर रमणीय भले लगे पर वास्तवमें रमणीय नही होता।

जहाँ सत्य भी हो, कल्याण भी हो और रमणीयता भी हो, वहाँ आनन्द होगा ही, भले फिर कष्ट हो या आराम।



अभिव्यक्ति

विफलतासे शून्य सफलता है भी कहाँ? विद्युत्‌की पूर्ण अभि-व्यक्तिमें बल्ब सफल नही होता पर प्रकाशकी व्यजनामे जो क्षमता उसे प्राप्त है, वह उसकी विफलता नही है। यदि बल्ब नही होता तो विद्युत्-शक्ति ही रहती, प्रकाश-रूपमे अभिव्यक्ति नही पाती। शक्तिका स्वयमे मूल्य है। व्यवहार-जगत्‌मे मूल्य अभिव्यक्तिका ही है।



चरम दर्शन

घोडा खड़ा रहा, आरोही उड चला। नाव पडी रही, नाविक उस पार चला गया। पिजडा पडा रहा, पछी उड चला। फूल लगा रहा, सौरभ चल बसा। बाती धरी रही, ज्योति-पुंज ज्योति-पुजसे जा मिला।



आँखों देखा सच

बहुत बार लोग गर्वकी भाषामे कहते है - यह आँखो देखा सच है। पर प्रश्न यह है कि क्या सत्य आँखोसे देखा जा सकता है। गाडी दौडती है - दीखता है पासमे खडे पेड दौडे जा रहे हैं। पर जो दौडते है, वे पेड नही होते।



मानो या मत मानो

मै धार्मिक हूँ – यह तुम मानो या मत मानो किन्तु यह तो मानो कि मै अधार्मिक हूँ ।

मै आस्तिक हूँ – यह तुम मानो या न मानो किन्तु यह तो मानो कि मैं नास्तिक हूँ ।

मै प्रकाश हूँ–यह तुम मानो या न मानो किन्तु यह तो मानो कि मै अन्धकार हूँ ।

तुम नही जानते प्रकाश वही होता है कि जो अँधेरेमें-से निकलता है । धर्म वही होता है जो अधर्ममे-से निकलता है । आस्था वही होती है, जो अनास्थामे-से उपजती है ।



उपासनाका मर्म

सम्प्रदाय छोटा होता है और सत्य बडा। बडेकी उपासना करने-वाला छोटेको स्वय पा जाता है। छोटेकी उपासना करनेवाला बडे-से दूर रह जाता है।

सत्यका ठेका तुम्हारे पास भी नही है और मेरे पास भी नही है। तुम जो कहते हो वही सत्य है और वह सत्य नही है, जो मै कहता हूँ। इसका तुम्हारे पास क्या प्रमाण है?



स्मृति और विस्मृति

बहुत बार हम शब्दात्माको भुलाकर भी अर्थात्माको नही भुलाते और बहुत बार हम अर्थात्माको भुलाकर भी शब्दात्मा-की रट लगाया करते है। दोनोको अपूर्ण कहा जा सकता है पर दोषपूर्ण नही।



आत्म-विश्वास

जिसे अपने-आपपर भरोसा नही, उसके लिए यह दुनिया भयकर होगी और भरा होगा उसके लिए इस दुनियामे ज़हरका समुन्दर। पर मेरे लिए तो यह दुनिया बहुत ही मधुर है, बहुत ही सुन्दर और बहुत ही प्यारी। वह इसलिए कि मेरा प्यारा प्रभु परिस्थितिकी खिडकीसे कभी नही झांकता।



प्रतिबिम्ब

सामनेवाला मेरे साथ अच्छा व्यवहार करता है, इसलिए मैं उसके साथ अच्छा व्यवहार न करूँ किन्तु उसके साथ मैं अच्छा व्यवहार इसलिए करूँ कि वह मेरा धर्म है। सामनेवाला मेरे साथ बुरा व्यवहार करता है फिर भी मैं उसके साथ अच्छा व्यवहार करूँ और इसलिए करूँ कि वह मेरा धर्म है।

अच्छा व्यवहार करनेवालेके साथ मैं अच्छा व्यवहार करूँ और बुरा व्यवहार करनेवालेके साथ बुरा व्यवहार करूँ तो इसका अर्थ है कि अच्छाईमें मेरी कोई आस्था नहीं है और बुराईमें मेरा कोई वास्तविक विरोध नहीं है। मेरा कोई सिद्धान्त भी नहीं, जिसे मैं सुरक्षित रखूँ और मेरी अपनी कोई आकृति भी नहीं, जिसे मैं देखूँ। क्या मैं परिस्थितिके दर्पणमें वैसा प्रतिबिम्ब डालूँ जो मेरा अपना नहीं है।



व्यक्ति और विराट्

जो अपने बारेमें सोचता है, वह समूचे विश्वके बारेमें सोचता है। अपना विश्व उतना ही विराट् है, जितना यह विश्व है। अपनी समस्याएँ उतनी ही जटिल हैं, जितनी विश्वकी हैं।



आत्म-सत्य

रस्सीका एक ही सिरा होता तो गाँठ नही होती। मनुष्य अकेला ही होता तो द्वन्द्व नही होता। सिरपर एक ही बाल होता तो जटिलता नही होती। एक ही मस्तिष्क होता तो संघर्ष नही होते।

ये अलगाव, लडाइयाँ, उलझने और चिनगारियाँ बहुताके परिणाम है। यह विश्वाकाश बहुता और एकताके चाँद-सूरजसे रुका हुआ है। यह हमारा सूर्य बहुताकी अनभिव्यक्तिमे एकताकी स्पष्ट व्यजना है। अमावसकी रात एकताकी अनभिव्यक्तिमे बहुताकी स्पष्ट व्यजना है।

पूर्णिमाकी रात व्यक्ति और समष्टिका सुन्दर समन्वय है। व्यक्ति और समष्टिका सगम मिटनेवाला नही है। व्यक्ति भी सत्य है, समष्टि भी सत्य है। सत्यको मिटाया नही जा सकता।



झुकाव

अपने सम्प्रदायके विचार जो बुद्धिगम्य हैं, वे मेरी दृष्टिसे सत्य हैं और जो बुद्धिसे परे हैं, वे मेरे लिए चिन्तनीय हैं। दूसरे सम्प्रदायके विचारोंके प्रति भी मेरा यही दृष्टिकोण होना चाहिए। यह आग्रह नहीं, सत्यकी शोधका भाव है। इयत्ता नहीं, अनन्तकी ओर झुकाव है।

□